**व्रत त्योहार**

15 जनवरी, सोमवार- पोंगल, उत्तरायण, मकर संक्रांति, खिचड़ी
16 जनवरी, मंगलवार- माघ बिहु
17 जनवरी, बुधवार- गुरु गोबिंद सिंह जयंती
18 जनवरी, गुरुवार- मासिक दुर्गाष्टमी
21 जनवरी, रविवार - पौष पुत्रदा एकादशी
23 जनवरी, मंगलवार- प्रदोष व्रत (शुक्ल)
25 जनवरी, गुरुवार- पौष पूर्णिमा व्रत
26 जनवरी, शुक्रवार माघ प्रारंभ
29 जनवरी, सोमवार- संकष्टी चतुर्थी, सकट चौथ

**कैलेंडर**

# अचलगढ़ में होती है भगवान शिव के दाहिने अंगूठे की पूजा

पवन गौतम

अचलेश्वर महादेव मंदिर (माउंट आबू, राजस्थान) बेहद अद्भुत और अनूठा पूजा स्थल है। यहां भगवान शिव के दाहिने पैर के अंगूठे की पूजा होती है। मान्यता है कि इस पर्वत को स्वयं महादेव ने अपने दाहिने अंगूठे से थाम रखा है। स्कंद पुराण के अर्बुद खंड में भी इस मंदिर का जिक्र है। अचलेश्वर महादेव मंदिर पश्चिमी राजस्थान के सिरोही जिले में ऋषि वशिष्ठ की तपस्थली माने जाने वाले माउंट आबू से 11 किमी दूर अचलगढ़ में है। इस प्राचीन मंदिर के रहस्य हैं।

पौराणिक कथा के अनुसार, अचलगढ़ में एक गहरी और विशाल खाई थी। इस खाई में ऋषि वशिष्ठ की गाएं गिर जाती थीं। इससे परेशान ऋषियों ने देवताओं से खाई को बंद करने की गुहार लगाई, ताकि आश्रमों में पल रहीं गायों का जीवन बच सके। ऋषियों के आग्रह पर देवताओं ने नंदीवर्धन को उस खाई को बंद करने का आदेश दिया, जिसे अर्बुद नामक एक सांप ने अपनी पीठ पर रखकर खाई तक पहुंचाया था। अर्बुद सांप को इस बात का अहंकार हो गया कि उसने पूरा पर्वत अपनी पीठ पर रखा है। इससे अर्बुद सांप हिलने-डुलने लगा। इस वजह से पर्वत पर कंपन होने लगा। इससे घबराए भक्तों की पुकार सुन महादेव ने अपने अंगूठे से पर्वत को स्थिर कर अर्बुद सांप का घमंड तोड़ दिया।

अचलेश्वर महादेव मंदिर

### अचलगढ़ नाम का रहस्य

कहते हैं कि पर्वत को अचल करने की वजह से ही इस स्थान का नाम अचलगढ़ पड़ा। मंदिर में अंगुठानुमा प्रतिमा शिव के दाहिने पैर का वही अंगूठा है, जिससे शिव जी ने काशी से बैठे हुए इस पर्वत को थामा था। तभी से यहां अचलेश्वर महादेव के रूप में शिव जी के अंगूठे की पूजा की जाती है। मान्यता है कि भगवान शिव के अंगूठे ने पूरे माउंट आबू पहाड़ को थाम रखा है। जिस दिन अंगूठे का निशान गायब हो जाएगा, उस दिन माउंट आबू खत्म हो जाएगा। यह विश्व का इकलौता मंदिर है, जहां महाकाल के अंगूठे नुमा गोल भूरे पत्थर की पूजा होती है। यह गोल पत्थर गर्भगृह के एक कुंड से निकलता है। गर्भगृह की जिस गोल खाई से पत्थर निकला है, उसका कोई अंत नहीं है।

### तीन बार रंग बदलता शिवलिंग

इस मंदिर की एक खासियत यह भी है कि यहां स्थापित शिवलिंग दिन में तीन बार अपना रंग बदलता है। शिवलिंग देखने में एकदम सामान्य लगेगा, लेकिन इसके बदलते हुए रंग आपको हैरान कर देंगे। शिवलिंग का रंग सुबह लाल, दोपहर में केसरिया और रात में काला हो जाता है। मंदिर में पंचधातुओं से बनी चार टन वजनी नंदी की मूर्ति भी है। मंदिर परिसर के विशाल चौक में चंपा का विशाल पेड़ अपनी प्राचीनता को दर्शाता है। मंदिर की बाईं ओर दो कलात्मक खंभों का धर्मकांटा है, जिसकी शिल्पकला अद्भुत है। क्षेत्र के शासक राजसिंहासन पर बैठने के समय अचलेश्वर महादेव से आशीर्वाद प्राप्त कर धर्मकांटे के नीचे प्रजा के साथ न्याय की शपथ लेते थे।

### महादेव मंदिर में द्वारिकाधीश की उपस्थिति

महादेव मंदिर परिसर में ही द्वारिकाधीश का भी मंदिर है। गर्भगृह के बाहर वराह, नृसिंह, वामन, कच्छप, मत्स्य, कृष्ण, राम, परशुराम, बुद्ध व कलंगी अवतारों की काले पत्थर की भव्य मूर्तियां हैं। हर साल अचलेश्वर महादेव में शिवरात्रि पर्व विधि विधान पूर्वक हर्षोल्लास से मनाया जाता है।

अचलेश्वर महादेव मंदिर अचलगढ़ की पहाड़ियों पर अचलगढ़ के किले के पास स्थित है। खंडहर में तब्दील हो चुका अचलगढ़ किले का निर्माण परमार राजवंश द्वारा करवाया गया था। बाद में वर्ष 1452 में महाराणा कुंभा ने इसका पुनर्निर्माण कराया और इसे अचलगढ़ नाम दिया। अचलेश्वर महादेव मंदिर पहुंचने के लिए पहले माउंट आबू पहुंचना होगा।

# वेद वाणी और गुरु वाणी की संयुक्त गंगा प्रवाहित की थी गुरु गोविंद सिंह जी ने

सुनील दत्त पांडेय

सिखों के दसवें गुरु गोविंद सिंह जी ने वेदों और गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी के संयुक्त प्रचार-प्रसार के लिए निर्मल पंथ की स्थापना की थी। उत्तराखंड की सीमा से लगे हिमाचल प्रदेश के पोंटा साहिब में यमुना जी के तट पर तपस्यारत गुरु गोविंद सिंह जी को आत्मबोध हुआ और 1686 में उन्होंने पांच सिख अनुयायियों को संस्कृत और वेदान्त का अध्ययन करने के लिए उत्तर प्रदेश के संस्कृत भाषा ज्ञान के प्रमुख केंद्र काशी (वाराणसी) भेजा था।

गुरु गोविंद सिंह जी ने अपने पांच सिख भक्तों को निर्मल संत की संज्ञा दी और उन्हें संस्कृत के अध्ययन के लिए काशी रवाना किया। गुरु महाराज ने उन्हें उपदेश दिया कि वे गुरु ग्रंथ साहिब की गुरमुखी में लिखी वाणी के साथ-साथ संस्कृत भाषा में लिखी वेदों की वाणी का अध्ययन कर उसका भी प्रचार-प्रसार करेंगे। इस तरह निर्मल पंथ के संत भगवा धारण करते हैं और गुरुमुखी के अध्ययन के साथ-साथ संस्कृत भाषा में ज्ञान प्राप्त कर शास्त्री, आचार्य और वेदांताचार्य की उपाधि प्राप्त करते हैं। काशी में संस्कृत के अध्ययन के बाद ये संत अपनी परंपरा के निर्मल भेख के श्री निर्मल पंचायती अखाड़ा में विधिवत रूप से शामिल होते हैं। अखाड़े के श्री महंत और निर्मल भेख के परमाध्यक्ष उन्हें दीक्षा प्रदान करते हैं।

श्री निर्मल पंचायती अखाड़े के श्री महंत के पद पर पदासीन होने के लिए निर्मल संत को गुरुवाणी के साथ-साथ वेद वाणी में भी पारंगत होना पड़ता है। साथ ही शास्त्री, आचार्य या वेदांताचार्य होना भी आवश्यक है।

निर्मल संतों के अखाड़े-आश्रमों में गुरुवाणी के साथ-साथ वेद वाणी भी गुंजायमान होती है। गुरु ग्रंथ साहिब के पाठ के साथ-साथ गीता का पाठ भी किया जाता है और निर्मल अखाड़े व आश्रमों में पंचदेव पूजा की जाती है। गुरु नानक देव जी की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए गुरु गोविंद सिंह जी ने संस्कृत भाषा और वेद वाणी के पारंगत अपने अनुयायियों को निर्मल संत का नाम दिया। कहा जाता है कि जब गुरु नानक देव जी को पंजाब की बेई नदी के तट पर दिव्य ज्ञान की प्राप्ति हुई तो उन्होंने गुरु के रूप में पहली दीक्षा और गुरु मंत्र भाई भागीरथी निर्मल संत को दिया और निर्मल संप्रदाय की स्थापना की। गुरु नानक देव की परंपरा को आगे बढ़ाने का पुनीत कार्य सिखों के दसवें गुरु गोविंद सिंह जी ने किया। निर्मल संतों ने पूरे देश में विशेषकर हरिद्वार, ऋषिकेश, पंजाब, हरियाणा में संस्कृत के कई विद्यालय स्थापित किए, जहां छात्र -छात्राओं को संस्कृत की शिक्षा-दीक्षा निशुल्क प्रदान की जाती है। निर्मल संप्रदाय से जुड़े साधु-संतों की एकता और भाषा के प्रचार-प्रसार को संगठित व संस्थागत रूप प्रदान करने के लिए 1861 में निर्मल संप्रदाय के महान तपस्वी बाबा मेहताब सिंह महाराज ने श्री निर्मल पंचायती अखाड़े की स्थापना पंजाब के पटियाला में की। पटियाला के राजा ने निर्मल अखाड़ा की स्थापना के लिए जमीन, भवन और धन संपदा दान की थी।

> **कहा**
> जाता है कि जब गुरु नानक देव जी को पंजाब की बेई नदी के तट पर दिव्य ज्ञान की प्राप्ति हुई तो उन्होंने गुरु के रूप में पहली दीक्षा और गुरु मंत्र भाई भागीरथी निर्मल संत को दिया और निर्मल संप्रदाय की स्थापना की।

**गुरु गोविंद सिंह प्रकाश पर्व 17 जनवरी**

गुरु गोविंद सिंह जी एक महान योद्धा, कवि और दार्शनिक थे। 1675 में नौ साल की उम्र में उनके पिता गुरु तेग बहादुर का सम्राट औरंगजेब द्वारा सर कलम कर दिए जाने के बाद उन्हें औपचारिक रूप से सिखों के दसवें गुरु के रूप में स्थापित किया गया था।

कुछ समय बाद श्री निर्मल पंचायती अखाड़े का मुख्यालय पटियाला से उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में स्थानांतरित किया गया। उसके बाद हरिद्वार के उपनगर कनखल में श्री निर्मल पंचायती अखाड़े का मुख्यालय बनाया गया। श्री निर्मल पंचायती अखाड़ा की ओर से अखाड़े के मुख्यालय कनखल में वर्ष 1930 में संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए निर्मल संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की गई, जो आज संस्कृत भाषा का प्रमुख अध्ययन केंद्र है।

श्री निर्मल पंचायती अखाड़ा के श्री महंत ज्ञानदेव सिंह वेदांताचार्य का कहना है कि निर्मल संप्रदाय समाज श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में भी अहम योगदान देता है। निर्मल अखाड़े के संत केशधारी होते हैं और वे कड़ा व कोपीन पहनते हैं। निर्मल पंथ में कोई भी जाति भेद नहीं होता है। चारों वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र को निर्मल संत के रूप में दीक्षित किया जाता है और सभी वर्णों के लोग एक साथ एक पंगत में बैठकर भोजन प्रसाद ग्रहण करते हैं। निर्मल संप्रदाय का मूल मंत्र ह्यपंगत-संगत एक समानह्न हैं।

गुरु गोविंद सिंह जी का जन्म बिहार के पटना में 22 दिसंबर 1666 को पौष मास की शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दिन हुआ था। इस दिन उनका प्रकाश पर्व श्री निर्मल अखाड़ा और उनसे जुड़े आश्रमों में श्रद्धापूर्वक मनाया जाता है। इस बार 17 जनवरी को गुरु गोविंद सिंह जी का प्रकाश पर्व हिंदू पंचांग के अनुसार मनाया जाएगा।

गुरु गोविंद सिंह जी एक महान योद्धा, कवि और दार्शनिक थे। 1675 में नौ साल की उम्र में उनके पिता गुरु तेग बहादुर का सम्राट औरंगजेब द्वारा सर कलम कर दिए जाने के बाद उन्हें औपचारिक रूप से सिखों के दसवें गुरु के रूप में स्थापित किया गया था। उनके पिता नौवें सिख गुरु थे। मुगलों से हिंदुओं की रक्षा के लिए गुरु गोविंद सिंह जी ने 1699 में खालसा पंथ की स्थापना की। उन्होंने ही खालसा पंथ का उद्घोष वाक्य ह्यबोले सो निहालह्न दिया था। वे खालसा पंथ के प्रमुख रहे, जो उनकी मुगलों से लड़ने के लिए समर्पित योद्धाओं की एक फौज थी।

कनखल (हरिद्वार) में गंगा तट पर स्थित डेरा बाबा दरगाह सिंह तीजी पात शाही गुरु अमर दास जी के तप स्थल के महंत रंजय सिंह महाराज बताते हैं कि गुरु गोविंद सिंह जी ने आदि जगतगुरु शंकराचार्य की शास्त्र और शस्त्र की परंपरा को आगे बढ़ाया। इसलिए उन्होंने मुगलों से लड़ने के लिए और हिंदुओं की रक्षा के लिए खालसा पंथ की स्थापना की।

# जीवनकाल में ही इनसान की अहमियत समझें

रोहित कौशिक

अक्सर हम शोकसभाओं में दिवंगत इंसान की प्रशंसा कर उसे नकली विशेषण प्रदान करते हैं। किसी इनसान को नकली विशेषण प्रदान करना उसे वास्तविकता से दूर करना है। हम ताउम्र स्वयं भी वास्तवकिता से दूर भागते रहते हैं और दूसरों को भी वास्तविकता से दूर करते रहते हैं। अगर किसी इनसान की प्रशंसा ही करनी है तो उसके वास्तविक गुणों की प्रशंसा करनी चाहिए। एक बुरे इंसान में भी कुछ गुण अवश्य होते हैं। जरूरत इस बात की है कि हम बुरे इंसान के गुणों को पहचानकर उसकी प्रशंसा करें।

अमूमन हम बुरे इनसान के अवगुणों पर पर्दा डालकर उसके अंदर नकली गुण पैदा कर देते हैं और नकली गुणों की प्रशंसा करने लगते हैं। जबकि वास्तविकता यह होती है कि ये गुण उसके अंदर होते ही नहीं हैं। ऐसे लोगों को नकली विशेषण प्रदान कर हम एक नकली माहौल रचने का प्रयास करते हैं। इस नकली माहौल के कारण बहुत सारे भ्रम पैदा हो जाते हैं। सच्चाई यह है कि हम कई तरह के भ्रमों के साथ अपनी जिंदगी जीते हैं। एक समय ऐसा आता है कि भ्रम के चक्रव्यूह में फंसी जिंदगी ही हमें रास आने लगती है। अगर कोई इनसान इन भ्रमों को दूर करने के लिए हमें आईना दिखाता है तो वह हमें बुरा लगने लगता है। इसलिए दूसरा इनसान भी सोचता है कि भ्रम पैदा करने में ही भलाई है।

> किसी दिवंगत इनसान को शोकसभा में देवता बना देना और उसके जीवनकाल में उसे इनसान भी न मानना यह दर्शाता है कि हमारा व्यक्तित्व कमजोर बुनियाद पर टिका हुआ है। जाहिर है कि जब हमारा व्यक्तित्व कमजोर बुनियाद पर टिका होगा तो हमारी दृष्टि भी कमजोर होगी और हम एक धुंधली तस्वीर के सहारे दुनिया को समझने का प्रयास करेंगे।

**जीवन जगत**

यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि शोकसभाओं में भी एक तरह का भ्रम पैदा किया जाता है। इस भ्रम के सहारे ही दिवंगत इनसान को श्रद्धांजलि देने की कोशिश की जाती है। यही कारण है कि प्रायः शोकसभाओं के नकली माहौल में बहुत ही नकली तरीके से श्रद्धांजलि दी जाती है। कई जगहों पर तो तेरहवीं यानी रस्म-पगड़ी में बहुत बड़े स्तर पर भोज आयोजित किया जाता है। यह भी देखा गया है कि दिवंगत इनसान के जीवनकाल में बच्चे उसे सम्मान नहीं देते हैं लेकिन तेरहवीं में अपनी हैसियत दिखाने के लिए बड़े स्तर पर दावत का इंतजाम किया जाता है। यह विडम्बना ही है कि कई बुजुर्ग पर्याप्त देखभाल के अभाव में दम तोड़ देते हैं लेकिन उनकी तेरहवीं पर जबरदस्त इंतजाम कर यह प्रदर्शित किया जाता है कि हम अपने बजुर्गों के प्रति कितने संवेदनशील हैं।

दरअसल यह संवेदनशीलता नहीं है बल्कि संवेदनहीनता है। इससे दुखद और क्या हो सकता है कि कुछ लोग अपने बुजुर्गों की देखभाल में पैसा खर्च करने में कंजूसी बरतते हैं लेकिन दूसरी ओर उनकी मृत्यु के उपरांत आयोजित तेहरवीं में पानी की तरह पैसा बहाते हैं। यह विरोधाभास दर्शाता है कि कुछ लोगों की नजरों में इनसान का इतना महत्त्व नहीं होता है जितना कि अनेक प्रकार के कर्मकांडों और औपचारिकताओं का महत्त्व होता है।

ऐसा भी देखा गया है कि हम अपने बुजुर्गों को उनके जीवन काल में बुरा-भला कहते रहते हैं लेकिन जब वे इस दुनिया में नहीं रहते हैं तो हम उनकी प्रशंसा करने लगते हैं। ऐसी तारीफ का क्या लाभ है ? ऐसी प्रशंसा केवल दिखावे के लिए होती है। जाहिर है जो क्रियाकलाप दिखावे के लिए होता है, वहां सच्ची भावना नहीं होती है। जहां अपने बुजुर्गों के प्रति सच्ची भावना होती है, वहां उन्हें उनके जीवनकाल में बुरा-भला सुनने को नहीं मिलता है।

हमारे बुजुर्ग हमसे हीरे-जवाहरात नहीं चाहते हैं। वे केवल सम्मान चाहते हैं। उनके इस दुनिया से विदा लेने के बाद उनकी प्रशंसा करने के बजाय हम उनके जीवनकाल में उनकी प्रशंसा करेंगे तो उन्हें अच्छा लगेगा और यह हमें आशीर्वाद के तौर पर मिलेगा। हमारे इस क्रियाकलाप से उनका मन प्रसन्न रहेगा और वे ज्यादा स्वस्थ रहेंगे।

**आस्था**

हरिद्वार में मकर संक्रांति के मौके पर जुटे श्रद्धालु।

# भगवान का अर्चना अवतार है मूर्ति

शास्त्री कोसलेन्द्रदास

वैदिक काल में मूर्ति पूजा होती थी कि नहीं, इस विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। ऋग्वेद एवं दूसरे वेदों के लेखानुसार अग्नि, सूर्य, वरुण एवं अन्य देवताओं का पूजन परोक्ष रूप में होता था। ये देव किसी एक ही सच्चिदानंद तत्त्व की शक्ति या अभिव्यक्ति थे। ये प्राकृतिक दृश्य या आकस्मिक वस्तु के रूप में थे और संपूर्ण विश्व की विभिन्न गतियां थे। ऋग्वेद में कई स्थानों पर देवता भौतिक (शारीरिक) उपाधियों से युक्त भी बताए गए हैं, जो उनके विग्रह के रूप में है।

भारत रत्न डा. पांडुरंग वामन काणे ने हिंदू धर्म में एक विचित्र बात स्वीकार की है अधिकार भेद। इसके कारण ही बुद्धि, संवेग एवं आध्यात्मिक बल के आधार पर अधिकारों, कर्तव्यों, उत्सवों एवं पूजा में अंतर पाया जाता है। सभी व्यक्ति एक ही प्रकार के अनुशासन एवं अन्न-पान-विधि या पथ्य-अपथ्य नियम के योग्य नहीं माने जा सकते। मूर्ति-पूजा भी सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक नहीं थी। प्राचीन ग्रंथकारों ने कभी नहीं सोचा था कि वे मूर्ति पूजा भौतिक वस्तु की पूजा के रूप में करते हैं। उन्हें यह पूर्ण विश्वास था कि मूर्ति के रूप में वे परमात्मा का ध्यान करते हैं।

### भगवान का अवतार है प्रतिमा

महान वैष्णवाचार्य जगद्गुरु रामानुजाचार्य ने शास्त्रीय सिद्धांतों के मजबूत आधार पर ईश्वर के पांच रूप बताए हैं। ये पर, व्यूह, विभव, अंतर्यामी और अर्चावतार हैं। इन रूपों में अंतिम अर्चावतार की प्रतिमा के रूप में पूजा-अर्चना और उपासना होती है। भक्तों द्वारा अर्चना ग्रहण करने के लिए ही भगवान प्रतिमा के रूप में जो स्वरूप धारण कर लेते हैं, उसे अर्चा-अवतार कहा गया है।

### मंत्रों से होती है प्राण प्रतिष्ठा

मूर्ति में देवता की प्राण-प्रतिष्ठा वैदिक मंत्रों से होती है। यजुर्वेद का मंत्र मनोजूर्तिजुषता...ह्न प्राण-प्रतिष्ठा के लिए प्रसिद्ध है। छठी शती के आचार्य वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में वैदिक मंत्रों के साथ साधारण मंत्रों के प्रयोग का भी विधान किया है।

याज्ञवल्क्य-स्मृति के टीकाकार अपरार्क ने प्रतिमा-प्रतिष्ठा में पौराणिक विधि और पुराणों के मंत्रों के उच्चारण की बात उठाई है। प्राण-प्रतिष्ठा के पश्चात्कालीन ग्रंथों ने 11वीं शती के तंत्र-ग्रंथ शारदातिलक में दिए हुए प्राण-प्रतिष्ठा के मंत्रों का प्रयोग किया है। शारदातिलक ने प्राण-प्रतिष्ठा के लिए अपने पूर्व के ग्रंथों, जयाख्य-संहिता एवं प्रपंचसारतंत्र का अनुसरण किया है। देवप्रतिष्ठा-तत्त्व, दिव्यतत्त्व, व्यवहार-मयूख, निर्णय-सिंधु आदि ग्रंथों ने शारदातिलक से ही उद्धरण लेकर प्राण-प्रतिष्ठा की विधि का व्याख्यान किया है। जिस मंत्र से इन दिनों प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है, वह मंत्र इस प्रकार है - आं ह्रीं क्रों यं रं लं शं षं सं हों हंसः अमुष्य प्राणा इह प्राणाः। अमुष्य जीव इह स्थितः। अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि। अमुष्य वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। तंत्रराज नामक ग्रंथ ने प्राण-प्रतिष्ठा के लिए 40 अक्षरों का मंत्र बनाया है, जो तांत्रिक ग्रंथों की भाषा के अनुरूप है।

> **प्राण प्रतिष्ठा**
> मंदिर में स्थापित होने वाली मूर्तियों का आकार 16 अंगुल से अधिक नहीं होना चाहिए। मंदिर में मूर्ति के लिए निम्न नियम काम में लाना चाहिए - मंदिर के द्वार की ऊंचाई को आठ भागों में बांटा जाता है। पुनः सात भागों को एक-तिहाई एवं दो-तिहाई भागों में बांटना होता है।

> **महान**
> वैष्णवाचार्य जगद्गुरु रामानुजाचार्य ने शास्त्रीय सिद्धांतों के मजबूत आधार पर ईश्वर के पांच रूप बताए हैं। ये पर, व्यूह, विभव, अंतर्यामी और अर्चावतार हैं। इन रूपों में अंतिम अर्चावतार की प्रतिमा के रूप में पूजा-अर्चना और उपासना होती है।

### प्रतिमा का ऐसा हो आकार

घर में पूजने की मूर्तियों के विषय में मत्स्य-पुराण ने कहा है कि उनका आकार अंगूठे से लेकर 12 अंगुल से अधिक नहीं होना चाहिए। मंदिर में स्थापित होने वाली मूर्तियों का आकार 16 अंगुल से अधिक नहीं होना चाहिए। मंदिर में मूर्ति के लिए निम्न नियम काम में लाना चाहिए - मंदिर के द्वार की ऊंचाई को आठ भागों में बांटा जाता है। पुनः सात भागों को एक-तिहाई एवं दो-तिहाई भागों में बांटना होता है। मूर्ति का आधार सात भागों की एक तिहाई तथा मूर्ति दो-तिहाई (द्वार के 7/8 की 2/3) होनी चाहिए।

### शुद्ध चित्त से करें प्राण प्रतिष्ठा

पांचरात्र-आगम में आया है कि भगवान की मूर्तियों में प्राण प्रतिष्ठा कोई महापुरुष ही कर सकता है। जिसके प्रत्येक अंग में परमात्मा पूर्ण रूप से निवास करते हैं। वह शुद्ध महापुरुष ही प्राण प्रतिष्ठा करने के योग्य है, क्योंकि केवल वह ही है, जो अपने भीतर परमात्मा का आह्वान कर सकता है।